बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 207

समय पर नीतिगत प्रतिक्रिया

अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) ने मंगलवार को चालू वित्त वर्ष के लिए भारत का वृद्धि अनुमान 90 आधार अंक कम करके 6.1 फीसदी कर दिया। यह कटौती महत्त्वपूर्ण जरूर है लेकिन यह विश्लेषकों के लिए कतई चौंकाने वाली नहीं है। विश्व बैंक ने भी हाल ही में भारतीय अर्थव्यवस्था का वृद्धि पूर्वानुमान घटाकर 6 फीसदी कर दिया था। ऐसे बहुपक्षीय संस्थानों के अलावा भारतीय रिजर्व बैंक ने भी चालू वित्त वर्ष के लिए वृद्धि पूर्वानुमान 6.9 प्रतिशत से कम करके 6.1 प्रतिशत कर दिया था। अप्रैल-जून तिमाही में वृद्धि के आधिकारिक आंकड़े घटाकर छह वर्ष के न्यूनतम स्तर पर आने यानी 5 फीसदी होने के बाद देश की अर्थव्यवस्था के परिदृश्य में नाटकीय बदलाव आया है। अंतरराष्ट्रीय संस्थानों द्वारा वृद्धि के पूर्वानुमान में लगातार कमी किया जाना समझ में आता है क्योंकि वे अक्सर सरकारी एजेंसियों द्वारा दिए जाने वाले आंकड़ों और आकलन पर निर्भर होते हैं। परंतु चिंतित करने वाली बात यह है कि देश का नीतिगत प्रतिष्ठान तीव्र मंदी का पूर्वानुमान लगाने में नाकाम रहा। जुलाई में प्रस्तुत आर्थिक समीक्षा में चालू वर्ष के लिए 7 फीसदी वृद्धि दर का अनुमान जताया था। आम बजट में तो और आगे बढ़कर 12 फीसदी की नॉमिनल वृद्धि दर की बात कही गई थी। चार फीसदी मुद्रास्फीति के अनुमान (जो स्वयं अतिरंजित है) से इसके लिए वास्तविक जीडीपी वृद्धि दर कम से कम 8 फीसदी होनी आवश्यक है।

आदर्श स्थिति में बजट में मंदी का ध्यान रखा जाना चाहिए था क्योंकि अर्थव्यवस्था पिछली कई तिमाहियों से अपनी गति खो रही है। अप्रैल-जून तिमाही में आई गिरावट किसी बाहरी झटके की वजह से नहीं आई थी। यह सही है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था में भी मंदी आई है लेकिन इसका भी पहले से पूरा अनुमान नहीं था। तमाम प्रमुख संकेतकों का सही पाठ न कर पाने का सबसे बड़ा नुकसान यह है कि इससे नीतियां पूरी तरह प्रतिक्रिया आधारित हो जाती हैं। जबकि सक्रिय नीति निर्माण से नुकसान कम होता है। उदाहरण के लिए अगस्त की मौद्रिक नीति समीक्षा में आरबीआई ने वर्ष के वृद्धि अनुमान को 10 आधार अंक कम कर दिया। साथ ही नीतिगत रीपो दर में 35 आधार अंक की कमी की गई। उस वक्त कहा गया था कि 50 आधार अंक की कटौती ज्यादा हो जाती। बहरहाल, अक्टूबर में उसने वृद्धि अनुमान दोबारा बढ़ाया। मौद्रिक नीति पारेषण में दो से तीन तिमाही लगती है। इसे और बेहतर करना होगा। आईएमएफ का ताजा आर्थिक पूर्वानुमान दर्शाता है कि 2019-20 में मौद्रिक प्रोत्साहन के बिना विश्व अर्थव्यवस्था की वृद्धि 0.5 से कम रहती। मौद्रिक प्रोत्साहन ने चीन-अमेरिका कारोबारी युद्ध के प्रभाव को एक हद तक सीमित किया है। दूसरी तरह देखें तो बड़े वैश्विक केंद्रीय बैंकों ने व्यापारिक युद्ध से जुड़े जोखिम का आकलन किया और पहले ही जरूरी कदम उठाए। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में मौद्रिक नीति के प्रभाव को लेकर बहस चल रही है। यह उदाहरण है कि नीतियां कैसे बनें।

कमजोर वृद्धि भी सरकार के वित्त पर असर डालेगी। राजस्व सचिव अजय भूषण पांडेय ने इस समाचार पत्र के अंग्रेजी संस्करण से भेंटवार्ता में सही कहा कि वृद्धि अनुमानों को कम करने से वस्तु एवं सेवा कर संग्रह पर असर पड़ेगा। बहरहाल यदि सरकार ने मंदी को स्वीकार कर लिया होता तो शायद वह राजस्व और व्यय का सही आकलन रख पाती। ऐसे में देश के नीतिगत प्रतिष्ठान के लिए यह जरूरी है कि वह आर्थिक गतिविधियों के आकलन की क्षमता का आकलन करे। इससे नीतिगत प्रतिक्रिया बेहतर होगी। जैसा कि इस अखबार ने पहले भी कहा है, केंद्रीय बैंक, समेकित सूचकांक आधारित सूचनाओं के जरिये आधिकारिक आंकड़ों पर निर्भरता कम की जा सकती है। इससे न केवल आरबीआई को मौद्रिक नीति में मदद मिलेगी बल्कि सरकार को भी समायोजन का समय मिलेगा।

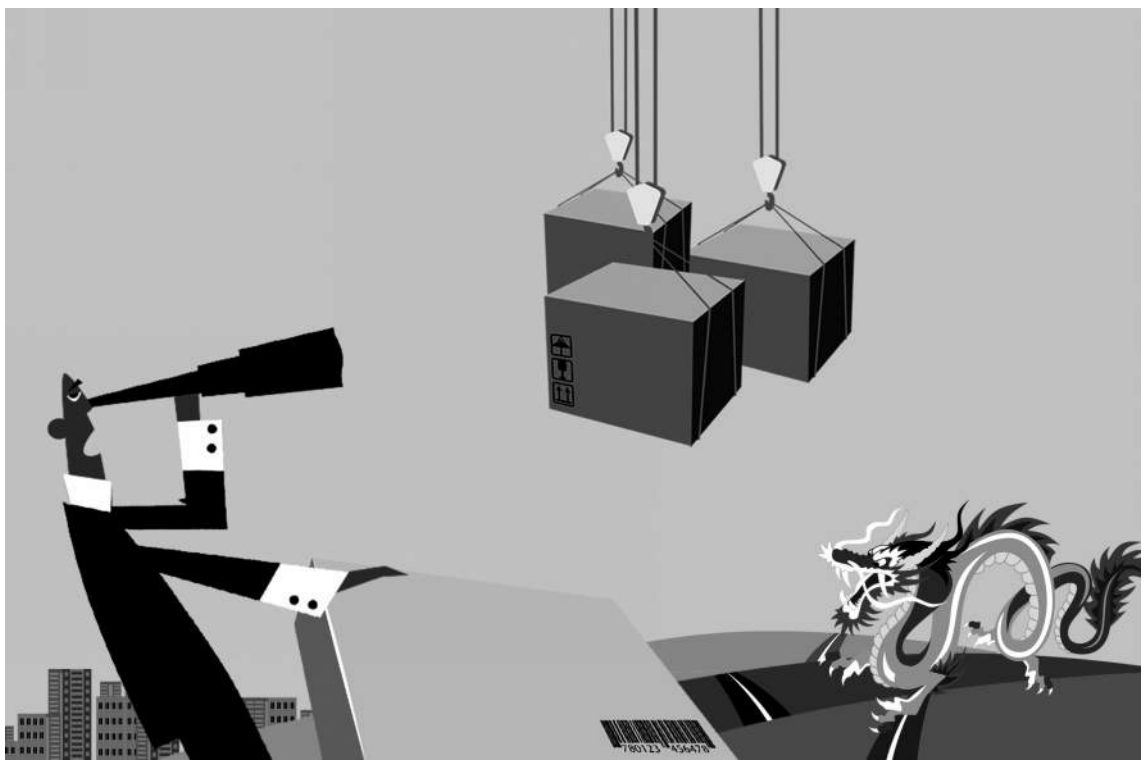

विनय सिन्हा

चीन से बाहर जाते कारोबार में भारत के लिए अवसर

पड़ोसी देश चीन से बड़े पैमाने पर कारोबार दूसरे देशों में स्थानांतरित हो रहा है। भारत के पास इस कारोबार के काफी हिस्से को अपने यहां स्थापित कराने का अवसर है। बता रहे हैं **नीलकंठ मिश्रा**

इन दिनों ऐसा कोई दिन शायद ही बीतता हो जब कारोबारी जंग की खबर सुर्खियां न बनती हो। इसके बावजूद कि चीन द्वारा अमेरिका से आयात होने वाली वस्तुओं पर शुल्क लगाने के एक साल बाद और वैश्विक मंदी के लिए कारोबारी जंग को दोष दिया जा रहा है, व्यापारिक आंकड़ों में कुछ खास बदलाव नहीं आया है। इसकी जांच परख करने के लिए क्रेडिट सुइस ने 100 ऐसी वैश्विक कंपनियों का सर्वेक्षण किया जिनका समेकित सालाना कारोबार एक लाख करोड़ डॉलर से अधिक है। उसने व्यापार संबंधी आंकड़े और दीर्घावधि के आर्थिक रुझान सामने रखे।

नैसर्गिक नीतिगत अनिश्चितता से परे ऐसी दो वजह मिलीं जिनके चलते विनिर्माण गतिविधियां चीन से दूर नहीं हुई हैं। पहला, चीन की क्षमता केवल अमेरिका को निर्यात करने की नहीं है बल्कि वह घरेलू मांग की भी पूर्ति करता है और अन्य गैर टैरिफ प्रभावित निर्यात बाजारों की भी। बीते एक वर्ष या अधिक वक्त में चीन से अमेरिका को होने वाले निर्यात में हुई कमी की भरपाई यूरोपीय संघ, वियतनाम तथा अन्य देशों को निर्यात बढ़ाकर हुई है। इनमें से कुछ वस्तुएं ऐसी हो सकती हैं जिनको शुल्क बचाने के लिए रास्ता बदलकर भेजा जा रहा हो। हमारी दृष्टि में इस प्रकार चीन के निर्माता अपना ढेर सारा सामान अन्य बाजारों में भेज रहे हैं। यहां दूसरी वजह सामने आती है, चीन से अमेरिका को होने वाले निर्यात में से तीन चौथाई जो तैयार माल के रूप में होता है वह सीधे उपभोक्ताओं को बेचा जाता है। मिसाल के तौर पर वस्त्र, खिलौने और मोबाइल हैंडसेट आदि पर केवल अंतिम सूची में कर लगता है।

पहली तीन सूचियों में बिचौलियां वस्तुएं अथवा वे वस्तुएं आती हैं जो निकायों को बेची जाती हैं। वहां कीमतों पर शुल्क का कोई बड़ा प्रभाव अंतिम उपभोक्ता पर नजर नहीं आता। खुदरा बाजार में बिकने वाला अंतिम उत्पाद जो इन पूर्व सूचियों का हिस्सा थे, उदाहरण के लिए वॉशिंग मशीन आदि, उनकी कीमत में टैरिफ के बाद भारी इजाफा हुआ और मांग में कमी आई। चूंकि विनिर्माता वैश्विक मांग के लिए चीन की क्षमताओं का इस्तेमाल करते हैं, इसलिए टैरिफ पर उनकी पहली प्रतिक्रिया यह है कि एक भौगोलिक क्षेत्र में एक ही देश मूल्य वृद्धि कर सकता है। जब मांग पर असर पड़ता है तब क्षमता में बदलाव का दबाव बढ़ता है।

इससे मध्यम अवधि का वह रुझान बढ़ता दिखता है जो पहले से सक्रिय है। हमने जिन फर्म का सर्वे किया उनमें से करीब दो तिहाई अपने उत्पादन का हिस्सा चीन से बाहर ले जा रही थीं या इसकी योजना बना रही थीं। अगर अमेरिका टैरिफ वापस ले ले तो भी इनमें से 90 फीसदी कंपनियां ऐसा करेंगी। इसकी प्रमुख वजह है चीन की श्रम शक्ति में आ रही कमी। माना जा रहा है कि सन 2030 तक चीन की श्रम शक्ति में 5 करोड़ की और गिरावट आएगी। माना जा सकता है कि यह गिरावट उन 20 करोड़ श्रमिकों में आएगी जो अभी कृषि क्षेत्र में हैं लेकिन विनिर्माण श्रमिकों की तादाद बीते चार साल में दो करोड़ कम हो चुकी है। इससे विनिर्माता परेशान हैं। हमारा अनुमान है कि श्रम आधारित क्षेत्रों मसलन इलेक्ट्रॉनिक्स और उपकरण निर्माण, कपड़ा एवं वस्त्र, जूते-चप्पल, खिलौनों और फर्नीचर आदि में अगले पांच साल में 90 लाख से 1.5 करोड़ तक श्रमिक कम हो सकते हैं।

चीन के निर्यात पर पड़ रहे असर को वहां की घरेलू मांग में इजाफा और खराब करेगा। चीन का बढ़ता निर्भरता अनुपात चार दशक पहले लागू की गई एक संतान नीति का प्रभाव है। उपभोक्ताओं की तादाद और उपभोग की उनकी क्षमता बढ़ेगी लेकिन उत्पादकों की तादाद नहीं बढ़ेगी तो निर्यात के लिए उपलब्ध अधिशेष में तेजी से कमी आएगी। मशीनीकरण से उत्पादन में कुछ इजाफा हो सकता है लेकिन आज के रोबोट वह क्षमता नहीं रखते जो मनुष्यों के पास है। कम से कम लागत के आधार पर।

हमारा अनुमान है कि अगले पांच वर्ष में इन उद्योगों में 350 से 550 करोड़ डॉलर का निर्यात चीन से बाहर जाएगा। अगर अन्य देश सक्षम रहे तो यह आंकड़ा बढ़ भी सकता है। सर्वेक्षण कहता है कि सबसे अधिक कंपनियां वियतनाम का रुख कर रही हैं। भारत दूसरे स्थान पर है। लेकिन वियतनाम का आकार इस अवसर का लाभ उठाने की दृष्टि से बेहद छोटा है। उसका विनिर्माण जीडीपी सालाना महज 5 अरब डॉलर की गति से बढ़ रहा है। बांग्लादेश के निर्यात का 90 फीसदी हिस्सा तैयार वस्त्र क्षेत्र में है और वह कारोबारी सुगमता के तमाम मानकों पर पिछड़ा हुआ है। अन्य पूर्वी एशियाई देश या तो छोटे हैं या वहां श्रम से जुड़ा लाभ नहीं है। उन्हें शायद इस बदलाव का लाभ न मिले।

वैश्विक श्रम शक्ति में 2030 तक होने वाले इजाफे का बड़ा हिस्सा सब-सहारा अफ्रीकी देशों, भारत, पाकिस्तान, इंडोनेशिया, उत्तरी अफ्रीका और पश्चिम एशिया में होगा। भारत और इंडोनेशिया को छोड़कर इनमें से अधिकांश देश चीन का स्वाभाविक विकल्प नहीं हैं।

भारत में कुछ बड़ी तकनीकी कंपनियां निर्यात केंद्र में निवेश कर रही हैं और बीते चार वर्ष में इलेक्ट्रॉनिक्स वस्तुओं के निर्यात में 25 फीसदी की वार्षिक वृद्धि देखने को मिली है जिससे इन वस्तुओं के आयात में वृद्धि नहीं हुई है। मोबाइल हैंडसेट के अलावा उपभोक्ता वस्तुओं में भी हमारी आत्मनिर्भरता बढ़ी है। अब तक केवल असेंबली का काम हो रहा है लेकिन अब कलपुर्जों की आपूर्ति भी हो रही है।

भारत में अब तक उच्च तकनीक आधारित विनिर्माण नहीं आ रहा है। सबसे अधिक निराशा वस्त्र क्षेत्र में हाथ लगी है जहां श्रम की लागत में काफी अंतर है। जबकि हमारे यहां इसका पूरा पर्यावास है और बड़े खरीदारों के कार्यालय देश में मौजूद हैं। चीन से बाहर जा रहा कॉटन वस्त्र निर्यात बांग्लादेश का रुख कर रहा है जबकि सिंथेटिक कपड़ों का कारोबार वियतनाम। बांग्लादेश में सस्ते श्रम के कारण कॉटन के कपड़ों का कारोबार वहां जाने की बात समझ में आती है लेकिन सिंथेटिक कपड़ों के मामले में चीन में श्रमिक भारत से तीन गुना महंगे होने और वियतनाम में भी 30 फीसदी महंगे होने के बावजूद कारोबार भारत नहीं आ रहा। कारोबारियों का कहना है कि सिंथेटिक धागा बनाने में लगने वाले रसायन पर उच्च आयात शुल्क ने देश में पूरी वैल्यू-चेन को प्रभावित किया है।

प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में तो कॉर्पोरेट कर में हालिया कटौती के पहले भी इजाफा हो रहा था। यह बीते छह महीनों में भारतीय अर्थव्यवस्था का एक सकारात्मक पहलू रहा है। इसका मजबूत बने रहना जरूरी है। परंतु अवसर कहीं अधिक व्यापक हैं जिन्हें गंवाना भारत के लिए श्रेयस्कर नहीं होगा।

मामल्लपुरम में मोदी-शी बैठक में नहीं निकला कोई ठोस नतीजा

दोधारी तलवार
अजय शुक्ला

रात्रिभोज तक का ब्योरा देने वाले जबरदस्त मीडिया कवरेज के बावजूद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और चीन के राष्ट्रपति शी चिनफिंग के बीच चेन्नई के निकट मामल्लपुरम में हुए अनौपचारिक शिखर सम्मेलन में शायद ही कोई नई बात सामने आई। अगर कोई कूटनीतिक कामयाबी थी तो वह भारत की सहनशीलता में थी जिसके चलते यह सम्मेलन संपन्न हो पाया। अगर चीन के प्रति कम मेहरबान देश होता तो उसी दिन सम्मेलन को निरस्त घोषित कर देता जब पाकिस्तान के प्रधानमंत्री इमरान खान के साथ शी की बैठक के बाद चीन ने कहा था कि वह पाकिस्तान की सभी मुख्य चिंताओं का समर्थन करता है। यह बयान समूचे जम्मू कश्मीर पर पाकिस्तान के दावे का समर्थन करने की तरह है जो कश्मीर विवाद में तटस्थ रहने के चीन के दावे को नकारता है। लेकिन इस बयान पर बहुत कड़ी प्रतिक्रिया नहीं जताए जाने से शी को यही संकेत मिला होगा कि चीन से ज्यादा भारत मोदी-शी मुलाकात को लेकर उत्सुक है। सम्मेलन में मोदी को शी से इमरान के साथ बैठक का ब्योरा भी चुपचाप सुनना पड़ा।

दोनों देशों ने मामल्लपुरम बैठक की अहम उपलब्धि यही बताई कि मोदी और शी के बीच पांच घंटों से भी अधिक समय तक वैश्विक मामलों, निवेश, व्यापार, आतंकवाद, पर्यटन और संपर्क बढ़ाने के मुद्दों पर चर्चा हुई। मोदी ने 'चेन्नई संपर्क' का जिक्र करते हुए कहा कि इससे भारत-चीन संबंध में 'नया दौर' आने की उम्मीद है। वहीं शी ने बैठक को 'दिल-से-दिल की बात' बताते हुए कहा कि वह और मोदी 'सच्चे दोस्त जैसे' हैं।

लेकिन अनुभव बताता है कि दो नेताओं के बीच राष्ट्रीय नजरिये के आदान-प्रदान से शांति का ही मार्ग नहीं प्रशस्त होता है, खासकर जब दोनों के बीच गहरी सामरिक प्रतिद्वंद्विता हो। ऐतिहासिक समझ रखने वाले प्रेक्षक माओत्से तुंग और जवाहर लाल नेहरु के बीच अक्टूबर 1954 में हुई साढ़े चार घंटे की मुलाकात को याद करेंगे जिसमें दोनों नेताओं ने दक्षिण एशिया में अमेरिका की भूमिका, वैश्विक परिवेश और भारत एवं चीन की स्थिति पर चर्चा की थी। लेकिन उस मुलाकात के आठ साल बाद दोनों देशों ने जंग लड़ी।

सच है कि लगातार सशक्त, संपन्न एवं हठधर्मी होते जा रहे चीन के साथ कूटनीतिक संपर्क रखने के सिवाय भारत के पास शायद ही कोई रास्ता है। लेकिन वह दोस्ती एवं भाईचारे के शब्दाडंबर से इतना भटक नहीं सकता कि इस बात को नजरअंदाज कर दे कि वुहान में हुए पहले अनौपचारिक सम्मेलन के बाद से चीन ने भारत की प्रमुख आर्थिक एवं सुरक्षा चिंताएं दूर करने के लिए कुछ भी नहीं किया है। भारतीय सेना चीन से लगी सीमा पर एक भी सैनिक की कटौती नहीं कर पाई है और हमारी सेना की तैनाती का आधार अब भी दोतरफा जंग की आशंका ही है। हम भारत-चीन सीमा विवाद के हल के आसपास भी नहीं हैं और चीन इस दिशा में उठाए जाने वाले शुरुआती कदमों को भी रोक देता है। अस्थायी सीमा के तौर पर मान्य वास्तविक नियंत्रण रेखा (एलएसी) पर सैन्य तैनाती के बारे में जानकारी साझा करने के मामले में भी यही हुआ है। चीन के प्रभावी थिंकटैंक के एक प्रतिनिधिमंडल ने यही कहा है कि सीमा विवाद को भावी पीढ़ियों पर छोड़ देना चाहिए। बैठक के बाद जारी आधिकारिक बयान भी चीन के इसी रुख की तस्दीक करता है। ऐसे में भारत-चीन संबंधों को मजबूत करने के लिए शी की 'सौ-वर्षीय योजना' का तो वजूद भी नहीं दिखता है।

भारत की आर्थिक चिंताएं भी बदस्तूर कायम हैं। चीन के साथ व्यापार घाटा कम करने और क्षेत्र के 16 देशों के बीच प्रस्तावित मुक्त व्यापार समझौते क्षेत्रीय समग्र आर्थिक भागीदारी (आरसेप) को लेकर अविश्वास कायम है। इस बारे में उच्च स्तरीय आर्थिक एवं व्यापार वार्तालाप व्यवस्था बनाई गई है। यह जल्दबाजी में किया गया प्राथमिक उपचार भर है। खुद विदेश सचिव विजय गोखले ने कहा कि इस पर संक्षिप्त चर्चा ही हुई।

पिछला अनुभव बताता है कि हमें अधिक अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। सीमा प्रबंधन के मुद्दे पर जनवरी 2012 और अक्टूबर 2013 में हुए दो सहयोग समझौते भी एलएसी पर शांति बनाने में नाकाम रहे हैं। शांति के बजाय अप्रैल 2013 में लद्दाख के देपसांग में तीन हफ्तों तक तनाव रहा, सितंबर 2014 में लद्दाख के ही चूमर में 16 दिनों तक सेनाएं आमने-सामने रहीं और जून-सितंबर 2017 में तो 73 दिनों तक सिक्किम से सटे डोकलाम में भारी तनाव बना रहा। वुहान सम्मेलन के बाद कुछ दिनों तक रही शांति बहुत जल्द खत्म हो गई।

विदेश सचिव ने बताया कि मोदी और शी के बीच कश्मीर पर कोई चर्चा नहीं हुई क्योंकि यह भारत का आंतरिक मामला है। कश्मीर पर चर्चा से परहेज के वाजिब कारण हैं लेकिन असल में यह आंतरिक मामला होने से दूर है। भारत के मुताबिक, जम्मू कश्मीर के 45,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर चीन का भौतिक कब्जा है जिसमें से 3,000 वर्ग किमी क्षेत्र चीन ने 1962 की जंग में हड़पा था और कभी नहीं लौटाया। बाकी 5,180 वर्ग किमी जमीन चीन को पाकिस्तान ने 1963 में दे दी थी। अगर अब पाकिस्तान के साथ उसके कब्जे वाले कश्मीर (पीओके) पर ही बात होनी है तो फिर चीन के कब्जे वाले लद्दाख पर चुप्पी साधने को कैसे सही ठहराया जा सकता है?

ऐसा लगता है कि अनौपचारिक सम्मेलन की अवधारणा अभी बनी रहेगी। मोदी ने अगले साल चीन आने का शी का न्योता स्वीकार भी कर लिया है। हालांकि महज दिखावा बनकर रह गए सम्मेलन से पाने को बहुत कम है और प्रतिस्पर्द्धी बयानबाजी हकीकत से कोसों दूर है। अगर मोदी ने कविता लिखी तो भारत में चीन के राजदूत सुन वेतोंग ने भी ट्वीट किया, 'वुहान से चेन्नई, यांग्सी नदी से गंगा तक चीन और भारत हाथों में हाथ डाले साथ खड़े हैं। ड्रैगन एवं हाथी एक साथ टैंगो नृत्य कर रहे हैं।' कई मुद्दों पर मतभेदों के बीच ऐसे मीठे बोल भारतीयों को कृपा बरसाने वाले लगते हैं। एक ड्रैगन के साथ हाथी का टैंगो करना अभी तो दूर की कौड़ी ही लगता है।

कानाफूसी

नयों से नाराजगी

भारतीय जनता पार्टी की उत्तर प्रदेश इकाई इन दिनों अलग तरह की समस्या से जूझ रही है। एक ओर प्रदेश में तमाम विपक्षी दल संघर्ष करते नजर आ रहे हैं, दूसरी ओर अन्य दलों के सदस्यों के लगातार भारतीय जनता पार्टी का रुख करने से उसके लिए अलग तरह की समस्या खड़ी हो रही है। नए नेताओं के निरंतर प्रवेश से भाजपा के पुराने नेताओं के मन में अनिश्चितता और संशय की स्थिति बन रही है। राज्य नेतृत्व जहां इन नए नेताओं को सार्वजनिक सभाओं और संवाददाता सम्मेलनों के माध्यम से पार्टी में शामिल करता है, वहीं पार्टी कार्यकर्ताओं को लगता है कि उनके हाथ से बड़े अवसर निकलते जा रहे हैं। इन अवसरों में आगामी विधानसभा उपचुनाव के दौरान होने वाला टिकट वितरण भी शामिल है। हालांकि इस विवादित विषय पर कोई भी सार्वजनिक रूप से कुछ कहने से इनकार कर रहा है। पार्टी में दूसरे और तीसरे दर्जे के नेता जरूर अवसर मिलने पर मीडिया को अपनी चिंताओं से अवगत कराते नजर आ रहे हैं।

आपका पक्ष

विकसित देश के लिए श्रम शक्ति जरूरी

किसी भी देश के लिए श्रम शक्ति आर्थिक विकास के लिए वरदान साबित होती है। पड़ोसी देश चीन ने श्रम शक्ति से अर्थव्यवस्था को विकसित कर विनिर्माण क्षेत्र में अपना दबदबा कायम किया है। भारत में वर्ष 2017-2018 में श्रम शक्ति दर 49.8 प्रतिशत रही जो वर्ष 2011-12 में 55.9 प्रतिशत थी। ये आंकड़े दर्शाते हैं कि देश की लगभग 50 प्रतिशत श्रम शक्ति का आर्थिक गतिविधियों में किसी भी प्रकार का योगदान नहीं है। जबकि कृषि क्षेत्र में आज भी जरूरत से ज्यादा कार्य शक्ति लगी हुई है। अगर कृषि क्षेत्र से अधिशेष कार्यशक्ति हटाया जाए तो कृषि उत्पादन में कोई खास असर नहीं पड़ेगा। देश को जनसांख्यिकीय लाभ लेना है तो श्रम बाजार में मौजूद इस असंतुलन को दूर करने की जरूरत है जिससे देश प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्रों में संतुलित विकास कर पाए। सरकार मेक इन इंडिया योजना इस इरादे से लाई थी कि विनिर्माण क्षेत्र में श्रम शक्ति के उचित इस्तेमाल से आर्थिक वृद्धि तेज होगी और बेरोजगारी दूर की जा सकेगी। लेकिन मेक इन इंडिया योजना अपेक्षा के अनुरूप कारगर साबित नहीं हो पाई है। सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योग में कुशल एवं अकुशल श्रमिकों की बड़े पैमाने पर जरूरत होती है। इसलिए इन

देश में वर्ष 2017-2018 में श्रम शक्ति दर 49.8 फीसदी रही जो 2011-12 में 55.9 फीसदी थी

उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए सरकार मुद्रा योजना लाई थी। इन उद्योगों से उत्पादित वस्तुएं बाजार में प्रतिस्पर्धा नहीं कर पा रही हैं जिससे मुद्रा योजना के तहत दिए गए कर्ज डूब रहे हैं। सरकार को इन उद्योगों के उत्पाद को संरक्षण प्रदान करना चाहिए ताकि यह उद्योग अपने प्राथमिक अवस्था में विकास कर पाए। ग्रामीण क्षेत्रों में श्रम शक्ति की सहभागिता दर 50.7 प्रतिशत है जो कृषि क्षेत्र से जुड़ी हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योगों की कमी है क्योंकि उद्योग लगाने के लिए बुनियादी संरचना नहीं है। अत: ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी संरचना को तेजी से विकसित करना जरूरी है जिससे यहां औद्योगीकरण को बढ़ावा मिल सके और ग्रामीण श्रम शक्ति का बेहतर इस्तेमाल हो सके।

निशांत महेश त्रिपाठी, नागपुर

जनसंख्या वृद्धि रोकने के हों प्रयास

विश्व में सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश चीन है और फिर भारत। हम अपने अस्तित्व पर आने वाले संकट के प्रति कब सावधान होंगे? भारत के लिए जनसंख्या वृद्धि एक अभिशाप बन गई है। यहां की जनसंख्या सवा अरब पार कर चुकी है। आधी से अधिक आबादी गरीबी रेखा से नीचे जिंदगी गुजार रही है। भारत में जनसंख्या वृद्धि के कारण गरीबी बढ़ती जा रही है। जनसंख्या वृद्धि के कारण बेरोजगारी भी बढ़ रही है। जनसंख्या वृद्धि के कुप्रभाव के कारण इसे नियंत्रित करने के लिए परिवार कल्याण कार्यक्रम चलाए गए। इसके अलावा भी सरकार ने कई कदम उठाए जिसमें मुख्य रूप से छोटे आकार वाले परिवार को प्रसन्न करना, विवाह के नियम को कठोरता से लागू करना आदि है। जनसंख्या वृद्धि को रोकने के लिए युवाओं को भी आगे आना होगा और हम दो हमारा एक का नारा भी पालन करना होगा। सभी प्रयासों से जनसंख्या के बढ़ते रक्तबीजों की वृद्धि पर रोक लगानी होगी।

अनु मिश्रा, सीवान

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।